श्रावण कृष्ण १२, गुरुवार, दिनांक - ०३-०९-१९६४

श्रावकाचार, गाथा - १ से ६, प्रवचन-११

पर्यूषण का पहला दिन है उत्तम क्षमा। उत्तम क्षमा उसे कहते हैं, जिसे आत्मा का अनुभव हुआ हो... सम्यग्दर्शनरहित क्षमा, वह उत्तम क्षमा नहीं है। लोग दृष्टान्त देते हैं न कि इस ईसु ख्रिस्ती ने क्षमा की, मोहम्मद ने क्षमा की, ऐसे दृष्टान्त बहुत आते हैं। वह क्षमा नहीं है। उत्तम क्षमा। उत्तम क्षमा उसे कहते हैं कि अपने में अपना आनन्दस्वरूप भगवान... कल कहा था न बहिन के शब्द में? जागृत जीव अन्दर ध्रुव पड़ा है—खड़ा है। उसकी अन्तर दृष्टि करके पूर्णानन्द का स्वीकार, सत्कार और स्वभाव का आदर करना.. आहाहा! समझ में आया? इसका नाम सम्यग्दर्शन है।

सम्यग्दर्शनरहित क्षमा को क्षमा गिनने में आती ही नहीं। कोई रागादि, क्रोध कषाय आदि अल्प करे तो वह शुभभाव है। पुण्य बँधता है। उत्तम क्षमा नहीं है। आहाहा! उत्तम क्षमा तो अपने आनन्द के अनुभवपूर्वक प्रतिकूल देव, मनुष्य, पशु और अचेतनकृत। देव, मनुष्य, पशु, अचेतन (इन) चार कृत कोई प्रतिकूलता आवे तो वहाँ ज्ञातादृष्टारूप से रहना और विकल्प उठाना नहीं, इसका नाम उत्तम क्षमा है। आहाहा! एक समय भी उत्तम क्षमा करे तो उस आत्मज्ञान को धर्म कहा जाता है। परन्तु यह क्षमा। समझ में आया? आहाहा!

कोई प्रतिकूल शब्द कहे, अपना दोष न हो और दोष कहे तो जानने कि यह तो दोष मुझमें है और कहता है तथा दोष मुझमें नहीं और कहता है तो वह तो अनजान है। उसे तो दोष की खबर नहीं और दोष मुझमें है और कहता है तो यह तो बराबर कहता है। समझ में आया? और मेरे में दोष कहता है, नहीं हो और कहता है तो यह बालक है, अज्ञानी है, इसे खबर नहीं। आहाहा! समझ में आया? और दोष कटु वचन से कहता है तो ऐसा जानना कि यह मुझे ताड़न तो नहीं करता न! समझ में आया? ताड़न करे तो (ऐसा जानना कि) यह मेरा वध तो नहीं करता। वध करे तो (ऐसा जानना कि) मेरे आत्मप्राण का—आत्मधर्म का घात तो नहीं करता। सेठ! इसका नाम उत्तम क्षमा है। आहाहा! एक भी बोल यथार्थ समझ में आये तो पूरी चीज़ भान में आ जाए। आहाहा!

भगवान आत्मा जागती ज्योति चैतन्यबिम्ब प्रभु में तो पूर्ण अकषायस्वभाव ही भरा है। आहाहा! वह जिसके अन्तर में, परमानन्द का नाथ बादशाह परमात्मा परमात्मस्वरूप का जिसे अन्दर में स्वीकार हुआ, दृष्टि में परमात्मस्वरूप का अन्तर आत्मा में स्वीकार हुआ, उसका नाम अनुभव और सम्यग्दर्शन है। समझ में आया? उस सम्यग्दर्शनसहित क्षमा होती है। यह तो दृष्टान्त अन्दर कल आया है श्वेताम्बर का। उत्तम क्षमा का आया न? भाई! नहीं? वह क्या कहलाता है? जैनसन्देश आया है। सब अन्यमति के दृष्टान्त दिये हैं। ईशु ख्रिस्ती ने ऐसी क्षमा की, मोहम्मद ने ऐसा किया, योगीराज यह स्वामी नारायण में हो गये हैं न एक? उन्होंने ऐसी क्षमा की। वह क्षमा ही कहाँ है? उसे अभी आत्मज्ञान क्या चीज़ है, इसकी खबर नहीं, क्षमा कहाँ से आयी? समझ में आया?

मुनिराज को घाणी में पेला तो वे मुनि तो आनन्दस्वरूप में रमते थे। आहाहा! घाणी में पेला, इसका भी ख्याल नहीं था। आहाहा! और प्रतिकूलता में द्वेष का अंश भी नहीं था और अनुकूलता का ढ़ेर हो... आहाहा! तो भी रति का, राग का जिनके अभाव है और अपने आनन्दस्वरूप में शान्ति से रहते हैं, इसका नाम उत्तम क्षमा कहते हैं। समझ में आया? देश के लिये मारते हैं, उसे क्षमा करते हैं, वह क्षमा नहीं है। यह लड़के मर नहीं जाते? क्या कहते हैं उसे?

मुमुक्षु : शहीद।

पूज्य गुरुदेवश्री : शहीद हुआ। धूल भी शहीद नहीं। सुन तो सही। तुझे खबर नहीं, भाई! जहाँ अपना देश है, ऐसा मानता है, वही मिथ्याभाव है। उसे सहन करे, वह क्षमा नहीं। शान्तिभाई! ऐसा मार्ग है, बापू! आहाहा!

जिसे परमात्मा... सर्व जीव परमात्मस्वरूप है, भगवन्त स्वरूप है। आहाहा! किसी प्राणी के प्रति राग-द्वेष होता है, वह राग-द्वेष इसका स्वरूप नहीं है। अपना स्वरूप नहीं तो उसे भी चैतन्यस्वरूप आनन्दकन्द है, ऐसा देखता है। किसके ऊपर द्वेष करना? समझ में आया? भगवान चिदानन्दस्वरूप से ज्ञायकस्वरूप से विराजमान भगवत्स्वरूप सब आत्मा है। आहाहा! पर्याय में एक समय की भूल है, वह तो एक समय की भूल है। अनन्त प्राणी निगोद से लेकर मिथ्यादृष्टि जीव एक सेकेण्ड के असंख्य

भाग में एक समय की भूल है। बाकी पूरी चीज़ भगवान है। लो, भगवानदासजी! भगवान है, यहाँ तो कहते हैं।

मुमुक्षु : एक समय की भूल में चौरासी...

पूज्य गुरुदेवश्री : एक समय की भूल में चौरासी के अवतार हैं। एक समय की भूल पर्याय में है, उसके पीछे भगवत्स्वरूप परमात्मा (विराजता है)... आहाहा! उसमें भूल का अभाव है और पर्याय का अभाव है। भूल का तो अभाव है परन्तु वर्तमान जो ज्ञानादि की पर्याय है क्षयोपशम अवस्था, उसका भी उसमें अभाव है। ऐसी चीज़ को श्रद्धा-ज्ञान में लेकर... आहाहा! पर की अनुकूलता और प्रतिकूलता में (ज्ञाता-दृष्टा रहे)। वह तो ऐसा कहते हैं कि प्रतिकूलता आवे तो जरा द्वेष हो जाए, पश्चात् जीते। ऐसा नहीं है। यह परीषह की व्याख्या ही नहीं है। परीषह की व्याख्या (यह है कि) प्रतिकूलता के काल में आनन्द की पर्याय उत्पन्न करना—क्षमा। प्रतिकूलता का विकल्प आया और पश्चात् जीतना, यह परीषह की व्याख्या ही नहीं है। समझ में आया?

परि अर्थात् समस्त प्रकार से सहन करने का अर्थ ज्ञाता-दृष्टारूप से जानना। आहाहा! भगवत्स्वरूप परमात्मा कौन दोषी है और कौन रागी है? आहाहा! समझ में आया? ऐसी दृष्टि करना। और उस दृष्टिसहित क्षमा-शान्ति करने का नाम उत्तम क्षमा है। लो, यह पहला दिन है।

पद्मनन्दि आचार्य महाराज इस भरतक्षेत्र में लगभग ९०० वर्ष पहले महा भावलिंगी सन्त दिगम्बर मुनि, आत्मध्यानी, ज्ञानी महान सन्त हुए। उन्होंने जंगल में २६ अधिकार लिखे। २६। नाम दिया पद्मनन्दि पंचविंशति, अधिकार २६ है परन्तु पच्चीस अधिकार (प्रमाण नाम दिया है)। पद्मनन्दि पचीस वह प—पा का मेल खाता है न। 'पद्मनन्दि पंचविंशति' उसमें अधिकार २६ है। जंगल में रहनेवाले मुनि। अन्तर में कितने ही निश्चय अधिकार में बात की है कि यह आत्मा... जैसे सवेरे अपने चलता है न? ऐसे कहा है कि यह आत्मा कर्म और कर्म से उत्पन्न हुए विकल्पों से भिन्न है। समझ में आया? कर्म, शरीर आदि से तो भिन्न है परन्तु पुण्य और पाप के विकल्प जो विकार, यह कर्म का कार्य है; वह आत्मा का कार्य नहीं, स्वभाव का कार्य नहीं। इसी शास्त्र में है, तथापि यहाँ अधिकार आयेगा।

मुमुक्षु : गम्भीर शास्त्र....

पूज्य गुरुदेवश्री : इसी और इसी में कहा हुआ है और उसमें भी यही है। समझ में आया?

वस्तु चैतन्यमूर्ति, वह तो पुण्य-पाप के विकल्प और शरीरादि, यह सब परवस्तु है, उससे अत्यन्त भिन्न है। ऐसी अन्तर्दृष्टि और अनुभव होना, इसका नाम सम्यग्दर्शन-ज्ञान और चारित्र है। समझ में आया? तथापि जब चरणानुयोग की पद्धति से व्याख्यान आवे, गणधर की रचना में भी ऐसा आवे। किस प्रकार से आवे, वह स्वयं यहाँ पद्मनन्दि आचार्य श्रावकाचार (कहते हैं)। यह छठवाँ अधिकार है। इसका नाम श्रावकाचार है। दूसरा इसका नाम उपासक संस्कार कहा जाता है। उपासक, वह श्रावक। उपासक अर्थात् श्रावक। ऐसे अन्य में—श्वेताम्बर में कहलाता है न? श्रमणोपासक उसे कहते हैं। श्रमण अर्थात् साधु के उपासक, सेवक, संस्कार। वह उपासक संस्कार का यह दूसरा नाम है। अन्तिम गाथा में है। इसकी ६२ गाथाएँ हैं। यह चरणानुयोग की पद्धति से इसमें कथन है। पहली गाथा। विनय करके श्रावकाचार का वर्णन करते हैं।

गाथा १

आद्यो जिनो नृपः श्रेयान् व्रतदानादिपुरुषौ।
एतदन्योन्यसम्बन्धे धर्मस्थितिरभूदिह।।१।।

अर्थ : आदि जिनेन्द्र श्री ऋषभनाथ और श्रेयांस नामक राजा, ये दोनों महात्मा व्रततीर्थ तथा दानतीर्थ के प्रवर्ताने में आदि पुरुष हैं और इस भरतक्षेत्र में इन दोनों के सम्बन्ध से ही धर्म की स्थिति हुई है॥१॥

गाथा - १ पर प्रवचन

आद्यो जिनो नृपः श्रेयान् व्रतदानादिपुरुषौ।
एतदन्योन्यसम्बन्धे धर्मस्थितिरभूदिह।।१।।

देखो! यह श्लोक पद्मनन्दि आचार्य का। इसका अर्थ। **आदि जिनेन्द्र श्री ऋषभनाथ...** इस चौबीसी के आदि जिनेन्द्र। अनन्त काल के आदि नहीं। अनन्त काल में तो अनन्त अनादि से तीर्थंकर चले आये हैं। इस काल चौबीसी के इसमें आदि जिनेन्द्र, जो अठारह कोड़ाकोड़ी सागरोपम में भरतक्षेत्र में तीर्थंकर नहीं थे। अठारह कोड़ाकोड़ी। नव कोड़ाकोड़ी यह, नव कोड़कोड़ी उस चौबीसी में नहीं थे। इसमें यह हुए, इसलिए इन्हें आद्य तीर्थंकर कहा जाता है।

आदि जिनेन्द्र श्री ऋषभनाथ... 'आद्यो जिनो' ऐसा शब्द पड़ा है न? **और नृप श्रेयांस...** श्रेयांस नामक राजा। **यह दोनों महात्मा...** स्वयं ... है। **व्रत तीर्थ और दान तीर्थ के प्रवर्तक में...** वहाँ धर्म का शब्द यहाँ दान चाहिए। व्रत तीर्थ और दान तीर्थ **दोनों प्रवर्तक में आदि पुरुष हैं।** दोनों में आदिपुरुष हैं। अठारह कोड़ाकोड़ी सागरोपम में व्रत नहीं थे और दान लेनेवाले पुरुष नहीं थे, इसलिए दान भी नहीं था। यह व्यवहार व्रत की बात चलती है, हों! और दान के व्यवहार दान और व्यवहार व्रत की बात चलती है।

निश्चयसम्यग्दर्शन और ज्ञान तथा भान तो भगवान को है, परन्तु पंच महाव्रत आदि के जो विकल्प उठे, उन्हें यहाँ व्रत कहकर भगवान ने व्रत चलाये। असंख्य काल में नहीं थे। असंख्य काल में, हों! अठारह कोड़ाकोड़ी। उसमें व्रत की आदि के करनेवाले भगवान प्रभु हैं। देखो! उसे व्रत तीर्थ कहा है। समझ में आया? और धर्म अर्थात् दान। व्रत, दान आदि, इन दोनों में आदिपुरुष ये दो हैं। इस चौबीसी में।

'एतदन्योन्यसम्बन्धे' अन्योन्य सम्बन्ध से व्रत के धारक भगवान और दान के देनेवाले श्रेयांसकुमार। धर्मस्थिति अभूत **'धर्मस्थितिरभूदिह'** इस भरतक्षेत्र में इनसे धर्म की स्थिति उत्तम हुई। व्रत धर्म और दान धर्म। यह व्यवहार धर्म की बात है। समझ में आया? निश्चय तो दोनों को सम्यग्दर्शन-ज्ञान और भान है। समझ में आया? परन्तु व्रत का धर्म शुभभाव पंच महाव्रत, अट्ठाईस मूलगुण के विकल्प जो आये, उन्हें इन्होंने धारण किया अथवा व्रतरूपी तीर्थ शुरु किया, ऐसा कहा जाता है। व्यवहार की पद्धति की कथन पद्धति ऐसी होती है। निश्चय में जहाँ आवे, वहाँ विकल्प को उत्पन्न करनेवाला और विकल्प का कर्ता, वह भी वस्तु के स्वभाव में नहीं है। ऐसा सम्यग्दृष्टि

दान देने की क्रिया के काल में जो दान के आहार आदि की क्रिया हो, उसका कर्ता नहीं परन्तु दान का विकल्प उठे, उसका वह कर्ता नहीं। यह निश्चय की दृष्टि में वस्तु ऐसी होने पर भी, व्यवहार के कथन में उन्होंने दान दिया और इन्होंने दान लिया, इन्होंने व्रत पालन किया और उन्होंने दान देकर व्रत का पोषण किया। कहो, समझ में आया?

इन ऋषभदेव भगवान को बारह महीने तक आहार नहीं मिला क्योंकि लोगों को विधि नहीं आती थी और यहाँ मिलने का योग नहीं था। समझ में आया? उसमें जब इनके बारह महीने पूरे हुए, श्रेयांसकुमार आदि, भरतादि को स्वप्न आया है। तो श्रेयांस को स्वप्न आया कि एक कल्पवृक्ष सूखा है और मेरे आँगन में आनेवाला है। ऐसा स्वप्न (आया)। निमित्तज्ञानी को पूछा कि यह क्या? भगवान आदिनाथ तीर्थंकर बारह महीने से आहार के बिना हैं। समझ में आया? छह महीने तपस्या की थी, छह महीना भिक्षा के लिये निकलते थे परन्तु आहार का योग नहीं बनना था, इसलिए वे देनेवाले लोग अनजान थे अर्थात् उन्हें ऐसे देना यह विधि तो सीखाने में अभी आवे नहीं। तीर्थंकर थे, मौनरूप से थे। समझ में आया? इसलिए उन लोगों को... आहार लेने जाए तो कोई रत्न दे, कोई स्त्री दे, कोई यह लो... यह लो! यह प्रभु है, ये कहीं आहार-रोटियों के लिये आते होंगे? समझ में आया? इस प्रकार के लोग अनजान, इसलिए इस प्रकार का योग नहीं बना। श्रेयांसकुमार को यह स्वप्न आया तब कहा, भगवान आज पधारनेवाले हैं। यह ही योग उनके यहाँ होगा। भगवान आये। ओहो! दो भाई हैं न! सोमदेव और श्रेयांस। बहुत प्रसन्न हुए। आहाहा! हमारे यहाँ कल्पवृक्ष आया। परन्तु आहार कैसे देना, इसकी खबर नहीं होती।

ऐसे नजर भगवान के ऊपर करने पर जरा संकल्प-विकल्प स्थिर हो गये। जातिस्मरण हुआ। श्रेयांस राजकुमार ऐसे दान देने निकले परन्तु कैसे देना और क्या करना, यह खबर नहीं होती। .... बाँधी बराबर ऐसे प्रभु के निकट... राजकुमार, हों! महा, मोक्षगामी जीव है। अन्तिम शरीर-चरमशरीर है। परन्तु जब तक यह स्थिति... शरीर सुन्दर है। ऐसे नजर (करते हैं), वहाँ जातिस्मरण (होता है)। पूर्व भव में— आठवें भव में ये ऋषभदेव प्रभु मेरे पति थे, मैं इनकी पत्नी थी। किस प्रकार खबर पड़ी इस जातिस्मरण में? समझ में आया? जातिस्मरण तो मतिज्ञान का धारणा का एक भेद

है। मतिज्ञान का-धारणा का एक प्रकार है। उसमें से ऐसा हुआ कि यही आत्मा पूर्व आठ भव पहले... अभी शरीर भी नहीं है, आत्मा दिखता नहीं। ऐसी जहाँ नजर (करते हैं) वहाँ मति की निर्मलता हुई। ऐसा ही आया। आप आठवें भव में मेरे पति थे। मैं पत्नी (थी)। मुनि को दान दिया था और इस विधि से मुनि को दान दिया था।

कहो, इस जातिस्मरणज्ञान में भी इतनी ताकत है। यह महिमा क्या है, इसकी लोगों को खबर नहीं है। इस मतिज्ञान की निर्मलता में कितनी ताकत! यह आत्मा दिखता है? उनका शरीर है? अभी यह शरीर (है, वह) तो वहाँ था नहीं। समझ में आया? और यही आत्मा आठवें भव में पतिरूप से था, यह मति की निर्मलता की धारणा में एकदम अन्दर से आया। यही आठवें भव में थे। समझ में आया? उन्हें इतना उल्लास आया। ओहोहो! मुनि को हम दोनों पति-पत्नी ने दान दिया। उसके फलरूप से आठवें भव में यह भगवान ऐसे आये हैं और मैं अभी राजकुमार रूप से बराबर कमर बाँधकर गन्ने के रस के... शेरडी समझे न? गन्ना। रस के घड़े आये हैं। वे घड़े उठाकर देते हैं। समझ में आया?

यह व्रतधारी हैं। ये दान के देनेवाले हैं, ऐसा व्यवहार से उनके निमित्त-नैमित्तिक सम्बन्ध के कथन चरणानुयोग में न आवे तो समझाने में आ नहीं सकता। वास्तव में व्रत को धारना, वह विकल्प है। दान देने का विकल्प और उन्होंने इन्हें दिया, यह भी व्यवहार है। दे कौन? आहार के रजकण दे कौन? और रजकण ले कौन? समझ में आया? भीखाभाई! बापू! तत्त्व की दृष्टिसहित के चरणानुयोग की कथन की पद्धति को जिस प्रकार से है, उस प्रकार से न समझे तो उसका एकान्त हो जाता है। समझ में आया? द्रव्यानुयोग का तत्त्वज्ञान है, वही सच्चा है। परन्तु कथन पद्धति की रीति भी चरणानुयोग में आती है, वह भी पद्धति की रीति उस प्रकार से सच्ची है। समझ में आया?

मुमुक्षु : ....

पूज्य गुरुदेवश्री : खबर नहीं थी तो दान की विधि जातिस्मरण बिना किस प्रकार खबर पड़े? कुछ सम्यग्दर्शन हो तो दान की विधि की खबर पड़ जाए? यह और किसने कहा? यह नहीं मालूम पड़ता। सम्यग्दर्शन में यह मालूम पड़ जाएगा? समझ में

आया? यह विधि दूसरी है। यह तो अन्दर का कोई ख्याल आवे, तब ही ख्याल आवे।

आत्मा का भान होने पर भी दान की विधि का ख्याल न हो। वह कहीं सम्यक्त्व हो, इसलिए ही ख्याल हो, (ऐसा नहीं है)। ऐसे जातिस्मरण हुआ इसलिए ख्याल आया। ओहो! प्रमोद... प्रमोद। आप कल्पवृक्ष मेरे घर में पधारे और आहारदान का मुझे योग हुआ, मेरा आँगन पवित्र हुआ। देखो यह! आँगन तो है पत्थर का। बड़े राजा हैं। ऐसे मणिरत्न के तल हों मणिरत्न की पाट पड़ी हो ऐसे नीचे जड़ी हुई। जैसे यह है न? यह टाईल्स-बाईल्स। वहाँ मणिरत्न की टाईल्स होती है राजकुमार के घर में। बड़े राजा हैं। और अभी पहला-पहला काल है चौथा। ओहो! पधारो... पधारो... पधारो... नमन है। वे आहार देते हैं और यह देनेवाले देते हैं और लेनेवाले लेते हैं। इन दोनों से इस काल में शुरु हुआ। व्रत और दान की विधि की शुरुआत इस काल में दो पुरुषों से हुई। दोनों पुरुष चरमशरीरी और मोक्षगामी हैं। समझ में आया? इन व्रत के परिणाम के कारण मोक्षगामी हैं और इस दान देने के भाव के कारण मोक्षगामी हैं, ऐसा नहीं है।

मुमुक्षु : ...

पूज्य गुरुदेवश्री : यह पद्मनन्दि चलती है। यह उतरती है न? सब खबर नहीं? समझ में आया?

परन्तु व्यवहार से उसमें यह शब्द आते हैं कि इस व्रत के कारण तिरे और दान के कारण तिरे। उसमें—निमित्त में उपचार करके, उससे तिरे, ऐसे कथन चरणानुयोग में आते हैं। उन्हें बराबर न समझे तो दृष्टि का विपर्यास होता है। क्योंकि जो सत्य सिद्धान्त है, वह कहीं पलट जाते होंगे?

मुमुक्षु : चरणानुयोग में आता है।

पूज्य गुरुदेवश्री : चरणानुयोग में आता है, इसलिए कहीं तत्त्व बदल जाता होगा? कहो, धन्नालालजी!

आदिपुरुष इस भरतक्षेत्र में इन दोनों के सम्बन्ध से... अन्योन्य सम्बन्ध हुआ न? देखो! अन्योन्य सम्बन्ध, निमित्त-नैमित्तिक सम्बन्ध। और यह तो व्यवहार हुआ। परन्तु बापू! इस वस्तु का कथन समझाना, यह आता है या नहीं? ओहो! उस **धर्म की**

स्थिति हुई... अभूत है अभूत? विसर्ग हो जाए। **'धर्मस्थितिरभूदिह' 'अभूदिह'** इस भरतक्षेत्र में भगवान पद्मनन्दि आचार्य महाराज कहते हैं, दो पुरुषों के कारण इस प्रकार से धर्म की स्थिति हुई। देखो! यह धर्मस्थिति व्रत और दान। यह व्यवहार दान और व्यवहार धर्म की स्थिति का वर्णन करते हैं। निश्चयधर्म तो जो स्वभाव के आश्रय से है, वह है।

चतुर्थ काल आदि में जिस समय कर्मभूमि की प्रवृत्ति प्रारम्भ हुई, उस समय सबसे पहले व्रत-तीर्थ की प्रवृत्ति श्री आदिश्वर भगवान ने की अर्थात् प्रथम इन्होंने ही तप आदि को धारण किया था। मुनिपना लिया न पहले, इन आदिनाथ भगवान ने। **उसी काल में दान-तीर्थ की प्रवृत्ति श्रेयांस राजा ने की थी अर्थात् सबसे...** यह प्रवर्ती कही न? हुई है उसे की है, प्रवर्ति की है, हुई है—ऐसा कहने में आता है। **सबसे पहले आदिश्वर भगवान को श्रेयांस राजा ने ही दान दिया था, इसलिए ये दोनों महात्मा, व्रत-तीर्थ तथा दान-तीर्थ के प्रवर्ताने में आदिपुरुष कहलाये...** यह आदि शब्द अन्तिम है। **इन दोनों के सम्बन्ध से इस भरतक्षेत्र में धर्म की स्थिति प्रारम्भ हुई है।** व्यवहारधर्म की स्थिति हुई है। आहाहा! जिस समय जो बात स्थापित करनी हो, जो समझाना हो, वह समझावे या नहीं? समझ में आया?

अब दूसरी गाथा। उसका मूल बताते हैं वापस। **आचार्य धर्म के स्वरूप का वर्णन करते हैं।** देखो! यहाँ धर्म कहा। **'धर्मस्थितिरभूदिह'** पाठ में है न? अब यहाँ वास्तविक धर्म का स्वरूप क्या है, यह उसकी बात साथ ही समझाते हैं।

गाथा २

सम्यग्दृग्बोधचारित्रत्रितयं धर्म उच्यते।
मुक्तेः पन्थाः स एव स्यात् प्रमाणपरिनिष्ठितः।।२।।

अर्थ : सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक्चारित्र इन तीनों के समुदाय को धर्म कहते हैं तथा प्रमाण से निश्चित यह धर्म ही मोक्ष का मार्ग है॥२॥

गाथा - २ पर प्रवचन

सम्यग्दृग्बोधचारित्रत्रितयं धर्म उच्यते।
मुक्तेः पन्थाः स एव स्यात् प्रमाणपरिनिष्ठितः।।२।।

देखो! व्यवहार पहला धर्म बतलाया। अब निश्चयधर्म यथार्थ क्या है, उसे दूसरी गाथा में बतलाते हैं।

सम्यग्दृग-सम्यग्दर्शन... भगवान आत्मा पूर्ण शुद्ध चैतन्य का अन्तर में ज्ञान का भान भूमिका में होकर प्रतीति होना, इसका नाम सम्यग्दर्शन। यह निश्चयसम्यग्दर्शन की बात है। समझ में आया? सम्यक् बोध। यह बोध लागू किया। सम्यग्-दृग— सम्यग्बोध। सच्चा ज्ञान। आत्मा का ज्ञान सच्चा ज्ञान, स्व ज्ञान का ज्ञान, स्व आत्मा का ज्ञान, वह सच्चा निश्चयमोक्षमार्ग है। और सम्यक्चारित्र... सम्यक्चारित्र। यह शब्द लागू पड़ा न तीनों को। सम्यक्चारित्र—स्वरूप में लीनता। निर्विकल्प आनन्द, निर्विकल्प शान्ति इन **'त्रितयं धर्म उच्यते।'** तीनों को भगवान धर्म कहते हैं। कहो, समझ में आया इसमें?

'मुक्तेः पन्थाः स एव' मुक्ति का पन्थ। **'स एव।'** यही मुक्ति का पन्थ है। **'स्यात् प्रमाणपरिनिष्ठितः'** कहो, समझ में आया? प्रमाण से निश्चित। **यह धर्म ही मुक्ति का मार्ग है।** व्यवहार से यह, निश्चय से यह। व्यवहार से यह व्रत-दानादि का भाव, निश्चय से यह।

मुमुक्षु : दो प्रकार का धर्म?

पूज्य गुरुदेवश्री : दोनों जाति के धर्म हैं। यह निश्चयधर्म और वह व्यवहारधर्म। धर्म नहीं है, उसे धर्म कहने का नाम व्यवहार है। धर्म है, उसे धर्म जानना, इसका नाम निश्चय। यहाँ तो... विधि अर्थात् व्यवहारधर्म कहा, निश्चयधर्म साथ में रहा है, यह दोनों बात साथ में की है। निश्चयरहित अकेले व्रत और दान के परिणाम, वे मोक्षमार्ग में व्यवहार से भी आरोपित नहीं किये जाते। समझ में आया?

सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक्चारित्र इन तीनों के समुदाय को धर्म कहते

हैं। एकत्र हुआ। तथा **प्रमाण से निश्चित यह धर्म ही मोक्ष का मार्ग है।** वास्तव में सम्यग्ज्ञान से निश्चित हुआ, इसका नाम ही वास्तविक धर्म कहा जाता है। अब इसके सामने बात करते हैं।

गाथा ३

रत्नत्रयात्मके मार्गे संचरन्ति न ये जनाः।
तेषां मोक्षपदं दूरं भवेद्दीर्घतरो भवः।।३।।

अर्थ : जो मनुष्य इस सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक्चारित्र स्वरूप मोक्षमार्ग में गमन नहीं करते हैं, उनको कदापि मोक्ष की प्राप्ति नहीं होती और उनके लिए संसार दीर्घतर हो जाता है, अर्थात् उनका संसार कभी भी नहीं छूटता॥३॥

गाथा - ३ पर प्रवचन

रत्नत्रयात्मके मार्गे संचरन्ति न ये जनाः।
तेषां मोक्षपदं दूरं भवेद्दीर्घतरो भवः।।३।।

जो मनुष्य, इस सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक्चारित्ररूप मोक्षमार्ग में गमन नहीं करते हैं,... परिणमन नहीं करते। मार्ग है न, इसलिए गमन करना, ऐसा (कहा है)। मोक्ष में पहुँचना है, उसका यह मार्ग है। भगवान आत्मा ज्ञान का दल, आनन्द का कन्द, वीर्य की मूर्ति, ऐसे आत्मा के सन्मुख होकर और सम्यक् श्रद्धा-ज्ञान-चारित्र में परिणमन नहीं करते, अन्तर में उसका अनुभव नहीं करते। **उनको कदापि मोक्ष की प्राप्ति नहीं होती... 'तेषां मोक्षपदं दूरं'** अर्थात् मोक्ष की प्राप्ति नहीं होती। लो! समझ में आया? जहाँ जाना है, उसका मार्ग लिये बिना मार्ग कैसे कटे?

पूर्णानन्द की प्राप्तिरूपी मुक्ति, पूर्णानन्द की प्राप्तिरूपी मुक्ति, उसका मार्ग स्वभाव में श्रद्धा-ज्ञान और चारित्र का परिणमन। समझ में आया? उसके साथ ऐसे व्यवहार के श्रद्धा, भक्ति, प्रेम, दान, व्रत आदि के भाव होते हैं। उन्हें भी व्यवहार से मोक्षमार्ग कहा

जाता है। कहो, समझ में आया इसमें? **'तेषां मोक्षपदं दूरं'** मोक्ष अर्थात् ऐसा मार्ग कहा। **'रत्नत्रयात्मके मार्गे संचरन्ति न ये जनाः'** मार्ग में जाते नहीं, उन्हें मोक्षपद— मार्ग का फल दूर है। अर्थात् उन्हें मोक्षपद नहीं होता। तब क्या है?

'भवेद्दीर्घतरो भवः' अनन्त संसार भव उसके पड़ा है। समझ में आया? **संसार दीर्घतर हो जाता है अर्थात् उनका संसार कभी भी नहीं छूटता। उदयभाव का नाश कभी नहीं होता।** संसार शब्द से उदय भाव, विकारी भाव। यह आत्मा के अन्तर स्वभाव की दृष्टि-ज्ञान की रमणता बिना इस उदयभावरूपी संसार का नाश कभी नहीं होता। यह दीर्घ काल संसार चौरासी में भटकनेवाला रहता है। कहो, समझ में आया? यह तो अमितगति आचार्य में कहा है न? विद्वान शास्त्र पढ़े, वाँचन करे, सीखे परन्तु शास्त्र में कही हुई दृष्टि, ज्ञान और चारित्र उसमें से निकाले नहीं, नमे नहीं और शास्त्र के दृष्टान्त दिया करे (कि) इस शास्त्र में यह कहा है और इस शास्त्र में (यह कहा है)। अज्ञानी का संसार स्त्री, पुत्र, परिवार। इन विद्वानों का संसार शास्त्र। समझ में आया?

जो शास्त्र को कहना है, जो आत्मा पर से निराला, उसका दृष्टि-ज्ञान और अनुभव, वह निकालता नहीं और वाद-विवाद किया ही करता है। इस शास्त्र में यह लिखा... इस शास्त्र में (यह लिखा)। सब है शास्त्र में। परन्तु शास्त्र का तात्पर्य (क्या)? समझ में आया? यह अपने आया न १७२ गाथा (पंचास्तिकाय)। अभी शुरु की है। वीतरागता है। राग और निमित्त का लक्ष्य छोड़कर चिदानन्द शुद्ध उपादान निज-अपना स्वभाव, उसकी श्रद्धा-ज्ञान-चारित्र नहीं करता और अकेले शास्त्र के पन्ने फिराया करता है। इसमें यह है और इसमें यह है। इसमें यह है और इसमें यह है। वह तो परमाणु है। उसमें बुद्धि जाए, वह भी व्यभिचारी बुद्धि है। समझ में आया? यह पद्मनन्दि में आता है। इसमें ही आता है। समझ में आया?

यहाँ उसे चरणानुयोग में व्यवहार सिद्ध करना है, इसलिए उसे व्यवहार तीर्थ, व्रत और दान का तीर्थ चलाया, उसमें धर्म चलाया। धर्म जो नहीं था, उसका प्रवाह खड़ा किया, ऐसा यहाँ कहने में आया है। और बात भी सच्ची है न? यह धर्म, व्रत और दान का भाव अठारह कोड़ाकोड़ी में किसी पुरुष को था नहीं। कहो, समझ में आया? अब इस धर्म के दो भेद।

गाथा ४

सम्पूर्णदेशभेदाभ्यां स च धर्मो द्विधा भवेत्।
आद्ये भेदे च निर्ग्रन्थाः द्वितीये गृहिणः स्थिताः।।४।।

अर्थ : और वह रत्नत्रयात्मकधर्म सर्वदेश तथा एकदेश के भेद से दो प्रकार का है उसमें सर्वदेश धर्म का तो निर्ग्रन्थ मुनि पालन करते हैं और एकदेशधर्म का गृहस्थ (श्रावक) पालन करते हैं॥४॥

गाथा - ४ पर प्रवचन

सम्पूर्णदेशभेदाभ्यां स च धर्मो द्विधा भवेत्।
आद्ये भेदे च निर्ग्रन्थाः द्वितीये गृहिणः स्थिताः।।४।।

अर्थ – ओहो! **यह रत्नत्रयात्मक धर्म, सर्वदेश तथा एकदेश के भेद से दो प्रकार का है;...** सम्यग्दर्शन और ज्ञान तो है, वह है, परन्तु साथ में चारित्र की पूर्णता और अपूर्णता की अपेक्षा से सर्वदेश और एकदेश कहने में आया है। समझ में आया? **रत्नत्रयात्मक धर्म, सर्वदेश...** पूरा। यह मुनि को होता है। दिगम्बर मुनि सर्वविरति जंगलवासी, वनवासी। अभी आयेगा, हों! विवाद। समझ में आया? ओहो! एक वस्त्र का धागा नहीं, एक विकल्प उठता है जरा पंच महाव्रत का, उसमें जिनका प्रेम नहीं। प्रेम लगा परमात्मा के साथ। पूर्णानन्द का प्रभु परमात्मा स्वयं निज परमात्मा के प्रेम में— ज्ञान-दर्शन-चारित्र में पूर्ण विरति से रमता है, उसे आद्य धर्म—उसे निर्ग्रन्थ धर्म कहने में आता है। सर्व देश धर्म। पूरा धर्म। समझ में आया इसमें?

तथा एकदेश... श्रावक को पंचम गुणस्थान में एकदेश धर्म है। चारित्र पूर्ण नहीं है और व्रत भी पंच महाव्रत जितने (नहीं हैं)। स्थिरता भी थोड़ी है। पंचम गुणस्थान में और व्रत परिणाम भी बारह व्रत के परिणाम हैं। मुनि को तो स्थिरता भी बहुत है और पंच महाव्रतादि अट्ठाईस मूलगुण के विकल्प हैं। इसलिए वह सर्वविरति धर्म सर्वदेश कहा जाता है। गृहस्थ का एकदेश धर्म, उसे एक अंश धर्म कहा जाता है।

उसमें सर्वदेश धर्म तो निर्ग्रन्थ मुनि पालन करते हैं... भाषा तो ऐसी ही आवे न! अट्ठाईस मूलगुण आदि मुनि पालन करते हैं, स्वरूप की स्थिरता भी वे मुनि पालन करते हैं। **और एकदेश धर्म का पालन श्रावक करते हैं।** पंचम गुणस्थानवाले। पहले बात की, हों! सम्यग्दर्शन-ज्ञानसहित एकदेश धर्म पंचम गुणस्थान में श्रावक पालन करते हैं। ऐसा इस चौथी गाथा में कहा।

पाँचवीं।

गाथा ५

संप्रत्यपि प्रवर्तेत धर्मस्तेनैव वर्त्मना।
तेने तेऽपि च गण्यन्ते गृहस्था धर्महेतवः।।५।।

अर्थ : इस कलिकाल में भी उस धर्म की उसी मार्ग से अर्थात् सर्वदेश तथा एकदेश मार्ग से ही प्रवृत्ति है, इसलिए उस धर्म के कारण, गृहस्थ भी गिने जाते हैं।।५।।

गाथा - ५ पर प्रवचन

संप्रत्यपि प्रवर्तेत धर्मस्तेनैव वर्त्मना।
तेने तेऽपि च गण्यन्ते गृहस्था धर्महेतवः।।५।।

देखो! मुनि कहते हैं कि वर्तमान में भी दोनों धर्म हैं। देखो! उस समय में भी (ऐसा था)।

अर्थ - इस कलिकाल में भी उस धर्म की उसी मार्ग से सर्वदेश तथा एकदेश मार्ग से ही प्रवृत्ति है,... मुनिमार्ग और श्रावकमार्ग दोनों हैं। नहीं हैं, ऐसा नहीं है। यथार्थरूप से हो, उसकी बात है न यहाँ। इसमें से निकाले कि लो, यहाँ भी है, तो अभी भी यह सब सर्वदेश और (एकदेश है)। ऐसा नहीं, बापू! है तो उस समय यथार्थ है, उसकी बात की है। समझ में आया? **एकदेश मार्ग से ही प्रवृत्ति है, इसलिए**

उस धर्म के कारण गृहस्थ भी माने जाते हैं। देखो! इसका कारण गृहस्थ भी... देशकारण धर्म है न! **'तेऽपि च गण्यन्ते गृहस्था धर्महेतवः'** श्रावक धर्म के हेतु हैं। समझ में आया?

मुमुक्षु : ...

पूज्य गुरुदेवश्री : अब आया न बराबर? उसमें भी है न नौवीं गाथा में वहाँ। नौवीं गाथा में है, देखो! गाथा नौ। नौ गाथा लिखा है वहाँ से। औषधिदान। २२० पृष्ठ। श्रावक-व्रतोद्योतन, दूसरा अधिकार है और उसकी गाथा नौवीं है। इसके बाद का दूसरा अधिकार, उसकी गाथा नौवीं। यह चलती गाथा ६२ है और इसके बाद श्रावक-व्रतोद्योतन है। उसकी गाथा नौवीं। देखो!

स्वेच्छाहारविहारजल्पनतया निरुग्वपुर्जायते
साधूनां तु न सा ततस्तदपटु प्रायेण संभाव्यते।
कुर्यादौषधपथ्यवारिभिरिदं चारित्रभारक्षमं
यत्तस्मादिह वर्तते प्रशमिनां धर्मो गृहस्थोत्तमात्।।९।।

देखो! कथन पद्धति! औषधिदान की व्याख्या करते हुए भगवान पद्मनन्दि आचार्य महाराज कहते हैं। **इच्छानुसार भोजन, भ्रमण और सम्भाषण से शरीर रोगरहित रहता है।** ऐई! यह निमित्त से समझाते हैं। भ्रमण-घूमना, खाना-पीना जब हो, उसके अनुकूल मिलता हो। नौवीं गाथा, श्रावक-व्रतोद्योतन। ६२ गाथा हो जाने के बाद नौवीं गाथा। तुरन्त ही यह अधिकार पूरा हो तो। समझ में आया? **परन्तु मुनियों के लिये न तो इच्छानुसार भोजन करने की आज्ञा है, न इच्छानुसार भ्रमण...** गर्म-गर्म तैयार रोटी मिले ऐसी गृहस्थों को तो। तवे में से सीधी। और शाम को घण्टे भर घूमने जाना। शाम, प्रातः जल्दी उठकर घण्टे-डेढ़ घण्टे घूमने जाए। क्या कहलाता है वह? हैंगिंग गार्डन। उस मुम्बई में है न एक? वहाँ बढ़िया है तो ऐसे घूमने निकले। कितने घण्टे, दो घण्टे। कहाँ गये जुगराजजी! है न वह घूमने-फिरने का मुम्बई में? यह तो एक बात करते हैं। शरीर अकड़ता है, चलो घूमो, ऐसा करो। मुनि को ऐसा नहीं होता। यह निमित्त से बात करते हैं, हों! चरणानुयोग की विधि का वर्णन है न?

सम्भाषण की आज्ञा है... यह तो द्रव्यसंग्रह में कहा नहीं? व्यवहारोलोकोउक्ति आता है न? भाई! द्रव्यसंग्रह में आता है। लघुद्रव्यसंग्रह है न, उसमें आता है। व्यवहार अर्थात् लौकिक बात। निश्चय अर्थात् यथार्थ वस्तु। इस लौकिक बात में शास्त्र में भी व्यवहार की ऐसी बातें आती हैं। समझ में आये (इस प्रकार से)। दूसरे प्रकार से किस प्रकार कहना? मुनियों को ठण्डा चाहिए हो और गर्म मिले, गर्म चाहिए हो और ठण्डा मिले। घूमने-फिरने का कुछ होता नहीं। राजमलजी। यहाँ तो भाई! सब बातें हो पूरे संसार की।

सम्भाषण की आज्ञा है, इसलिए उनका शरीर सदा... 'प्रायेण' इतना शब्द पड़ा है। **'प्रायेण'** है न? **'प्रायेण'** ऐसा करके बात डाल दी है। **किन्तु धर्मात्मा श्रावक उत्तम दवा, पथ्य, निर्मल जल देकर मुनियों के शरीर की चारित्र के पालन करने के लिये समर्थ बनाते हैं।** देखो, भाषा। चारित्र पालन के लिये (समर्थ) बनाते हैं। सवेरे की और यहाँ की दोनों बातें बराबर समझनी पड़ेगी। ऐई! देवीलालजी! इसलिए तो यह अधिकार लिया है। ऐसी (बातें) आती है। चरणानुयोग में पद्धति, उसमें आती है। महाराज! आपको यह रोग हुआ, लाओ औषधि दें। वह कहीं औषध नया नहीं लेते। वह तो आहार में साथ में देते हैं।

कहते हैं, **धर्मात्मा श्रावकगण उत्तम दवा, पथ्य और निर्मल जल शरीर से चारित्र पालन करने के लिये समर्थ बनाते हैं। मुनिधर्म की प्रवृत्ति भी उत्तम श्रावकों से होती है।'** देखो! है न इसमें? यह निमित्त से निमित्त-नैमित्तिक सम्बन्ध में ऐसे कथन आते हैं, भाई! उसे न समझे और एकान्त ले लेवे, तब तो पूरे तत्त्व का नाश हो जाता है। समझ में आया?

कहते हैं, **इसलिए मुनिधर्म की प्रवृत्ति उत्तम श्रावकों से होती है।** है न? **'धर्मो गृहस्थोत्तमात्'** ऐसा पाठ है। उत्तम गृहस्थ, विवेकी गृहस्थ, ज्ञानी गृहस्थ, उसे मुनि की सेवा, मुनि की भक्ति, आहारादि का भाव आता है। उससे मुनिपना टिकता है। दूसरी जगह दूसरा आता है (कि) मुनि को ही रत्नत्रय दिया। कहीं आता है या नहीं? यह दान में होगा। समझ में आया? मुनि के शरीर का मोक्ष का मार्ग शरीर से निभता है; शरीर आहार-पानी दे, आहार-पानी श्रावक दे। इसलिए श्रावक ने ही उसका मोक्षमार्ग दिया।

मुमुक्षु : ....

पूज्य गुरुदेवश्री : इसमें आता है। इसमें आता है, अपने दान में होगा कहीं? अपने कहाँ सब... यह आता है न? अपने व्याख्यान वांचन हो गया है। समझ में आया? ऐसा वहाँ आता है। आता है न? कहाँ गये भाई? किसमें दान में आता है या किसमें? दान की बारहवीं गाथा, लो भाई! दान का कितना अधिकार? दान का अधिकार कितने में? कितनी गाथा? बारह। यह बराबर है। बारह, इसमें पृष्ठ ११६ है। दान का अधिकार, इसमें बारहवीं गाथा। देखो! शैली तो सब समझना चाहिए या नहीं?

दाता की महिमा का वर्णन। बारहवीं (गाथा)

मोक्षस्य कारणमभिष्टुतमत्र लोके
तद्धार्यते मुनिभिरङ्गबलात्तदन्नात्।
तद्दीयते च गृहिणा गुरुभक्तिभाजा
तस्माद्धृतो गृहिजनेन विमुक्तिमार्गः।।१२।।

बारहवीं गाथा। **संसार में मोक्ष का कारण रत्नत्रय है।** संसार में मोक्ष का कारण रत्नत्रय—सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र है। **रत्नत्रय को शरीर में शक्ति होने से मुनिगण पालते हैं।** समझ में आया? यह निमित्त के सम्बन्ध से निमित्त का ज्ञान कराते हैं। ऐसी भी चरणानुयोग में कथन की पद्धति होती है। यह कथन मिथ्या नहीं है। यह व्यवहार की रीति से समझाने के लिये यह बात बराबर है। समझ में आया? ऐसा कोई बोले तो वह दृष्टि मिथ्यात्व है, उसे धर्म की खबर नहीं—ऐसा नहीं है। समझ में आया? ईश्वरचन्दजी!

मुमुक्षु : प्रयोजन के लिये...

पूज्य गुरुदेवश्री : प्रयोजनवान है। एक दूसरे के निमित्त का प्रयोजन है। निमित्त सिद्ध करना है।

और उन **मुनियों की शरीर शक्ति अन्न से होती है।** अन्न हो, उससे शरीर की शक्ति (रहती है), कहे। यह सब निमित्त-नैमित्तिक सम्बन्ध की व्याख्या है। **मुनियों के लिये उस अन्न को श्रावक भक्तिपूर्वक देते हैं। इसलिए वास्तविक रीति से गृहस्थ**

ने मोक्षमार्ग को धारण किया है, ऐसा समझना चाहिए। देखो! **'तस्माद्भूतो गृहिजनेन विमुक्तिमार्गः'** ऐसे व्यवहार से निमित्त-नैमित्तिक सम्बन्ध को प्रसिद्ध करने के लिए इस प्रकार से कथन होते हैं, दूसरा कथन नहीं होता। परन्तु उसका ऐसा ही मान ले (तो विपरीतता है)। अभी तो निश्चयमोक्षमार्ग शरीर से होता है, ऐसा भी नहीं है, उसके विकल्प से होता है—ऐसा नहीं है। विकल्प से होता है, ऐसा नहीं है। शरीर से तो कहाँ होगा? 'शरीराद्य खलु धर्म साधनं'—कहते हैं न? इस प्रकार व्यवहार से कहा जाता है। वास्तव में तो मोक्षमार्ग में विकल्प भी वास्तविक साधन नहीं है, परन्तु व्यवहार का ज्ञान कराने के लिये मुनि की भक्ति श्रावक को उत्पन्न हुई है, (इसलिए) आहार देता है, शरीर पुष्टि रहती है, इसलिए शक्ति से पालन हो, ऐसा निमित्त-नैमित्तिक की परम्परा का ज्ञान कराने के लिये यह कथन है। समझ में आया? धन्नालालजी! भाई! दोनों बात सामनेवाले की लेनी चाहिए या नहीं? वे कहें कि सामने नहीं है। वस्तु की स्थिति ऐसी है। समझ में आया? व्रत की अपेक्षा से दान को अधिक फल कहते हैं। यह तो ठीक, चलो। ..... रखा वहाँ।

अब यहाँ अपने चलता हुआ अधिकार। पाँचवीं गाथा हुई। **गृहस्थ भी गिने जाते हैं।** कौन? यह **'गृहस्था धर्महेतवः'** गृहस्थ धर्म के हेतु—निमित्त है, ऐसा शास्त्रकार पुकारकर कहते हैं। अब छठवाँ। यह थोड़ी गड़बड़ की गाथा है।

गाथा ६

संप्रत्यत्र कलौ काले जिनगेहे मुनिस्थितिः।
धर्रमश्च दानमित्येषां श्रावका मूलकारणम्।।६।।

अर्थ : और इस काल में श्रावकगण बड़े-बड़े जिनमन्दिर बनवाते हैं तथा आहार देकर मुनियों के शरीर की स्थिति करते हैं तथा सर्वदेश और एकदेशरूप धर्म की प्रवृत्ति करते हैं और दान देते हैं, इसलिए इन सभी के मूल कारण श्रावक ही है। अतः श्रावकधर्म भी अत्यन्त उत्कृष्ट है॥६॥

गाथा - ६ पर प्रवचन

संप्रत्यत्र कलौ काले जिनगेहे मुनिस्थितिः।
धर्रमश्च दानमित्येषां श्रावका मूलकारणम्।।६।।

यह पत्रों में भी आ गया है, यह देखो! मुनि अकेले वन में रहें, वन में रहें—ऐसा नहीं है। इस शास्त्र में पद्मनन्दि आचार्य ने कहा। धन्नालालजी! भाई! बात तो दोनों लेना चाहिए या नहीं? कहो, समझ में आया? क्या कहा?

अहो! **अर्थ – इस काल में श्रावकगण बड़े-बड़े जिनमन्दिर बनवाते हैं,...** यह बनवाते निकाला है गाथा बीसवीं श्रावक में से। अपने श्रावक व्रतोद्योतन है या नहीं? उसकी बीसवीं गाथा में यह सब स्पष्टीकरण है। बीसवीं-बीसवीं है न? बीसवीं। पृष्ठ २२६। बीसवीं। श्रावकद्योतन। देखो, यह वहाँ गाथा बीसवीं है। तत्प्रमाण अर्थ लेना। अथवा **'जिनगेहे'।** तो **'जिनगेहे'** अर्थात् कोई मन्दिर वन में बाहर भी होते हैं। समझ में आया? मुनि आकर बसे। ... मकान और मन्दिर आदि एकान्त में थे। यह तो अब सब (बदल गया)। जंगल में भी मन्दिर आदि थे। वहाँ आवे, मुनि बसे। तो कहते हैं, ...देखो! इसमें स्पष्टीकरण है। बीसवीं (गाथा)।

यत्र श्रावकलोक एष वसति स्यात्तत्र चैत्यालयो
यस्मिन् सोऽस्ति च तत्र सन्ति यतयो धर्मश्च तैर्वतते।
धर्मे सत्यघसंचयो विघटते स्वर्गापवर्गाश्रयं
सौख्यं भावि नृणां ततो गुणवतां स्युः श्रावकाः संमताः।।२०।।

अर्थ – जिस नगर में, देश में श्रावक लोग रहते हैं। देखो! रहते हैं। ऐसा है न पाठ में? बस्ती। **'स्यात्तत्र चैत्यालयो'** वहाँ जिनमन्दिर होते हैं। प्रतिमा, भगवान का दर्शन करने के लिये चैत्यालय होते हैं। देखो! है न? **और यहाँ पर जिनमन्दिर में यतिश्वर निवास करते हैं।** है न? **'यस्मिन् सोऽस्ति च तत्र सन्ति यतयो धर्मश्च'** भिक्षा के लिये आवे, दर्शन करे, बैठे। शास्त्र में आता है न वे मुनि? सप्तऋषि। आठ जगह गये थे और दूसरे ने दिये। और भगवान के दर्शन करने मन्दिर में गये। वहाँ आदर किया

दूसरे मुनियों ने। ओहो! यह मुनि तो अभी कहाँ से? हम तो घर से आये थे और यह तो भ्रष्ट हैं, ऐसा विचारकर नहीं दिया। यह तो महामुनि लगते हैं। मन्दिर में दर्शन करने गये। मुनि आये थे, अतः परिचय हो। देशना मिलें। संघ मिले, पुण्य हो। जिनप्रतिमा के मन्दिर होंवे तो मुनि आकर रहें तो बातचीत का प्रसंग बने और व्याख्यान सुनने को मिले। समझ में आया? आ चढ़ते थे वे लोग। कुन्दकुन्दाचार्य को। वह गये थे न अभी हम? पौन्नूर हिल। पौन्नूर हिल। उसके पास एक पौन्नूर नाम का तीन-चार-पाँच मील दूर एक गाँव है। पौन्नूर गाँव। उस गाँव में पुराना मन्दिर है और गढ़ भी पुराना दिखता है। वे लोग वहाँ के वृद्ध परम्परा कहते थे कि यहाँ मुनि कुन्दकुन्दाचार्य यहाँ से उतरकर दर्शन करने आते थे। इस मन्दिर में (आते थे) और यहाँ आहारदान की विधि के लिये निकलते थे। पौन्नूर हिल। वन्देवास से।

मुमुक्षु : ...

पूज्य गुरुदेवश्री : ऐसा कहते हैं। ऐसा उस समय था, ऐसा।

मुमुक्षु : ...

पूज्य गुरुदेवश्री : हाँ, अभी कहते हैं। तब सुना न! हमें कहाँ खबर थी। हम तो गये थे। मन्दिर पुराना है, गढ़ पुराना है, बहुत पुराना है। सब लोग साथ में थे तो हम पहले गये थे, फिर लोग गये थे। कहते थे कि कुन्दकुन्दाचार्य ऊपर से दर्शन करने यहाँ आते थे और आहारदान के लिये... यह पौन्नूर हिल एक ऐसा पर्वत है। आसपास में चार मील, पाँच मील में जैनों के बहुत घर। अकेले दिगम्बर। चारों ओर दिगम्बर। पाँच मील, चार मील चारों ओर घर। मुनि किसी समय ऐसे जाएँ, किसी समय ऐसे जाएँ। समझ में आया? ऐसा वे लोग कहते थे। हम तो वहाँ दर्शन करने गणधर की मूर्ति वहाँ है? एक गणधर की प्रतिमा भी वहाँ है। उस पौन्नूर में मन्दिर में। ऐसे हाथ है। दूसरे प्रकार से... प्रतिमा है। आसपास में छह-सात गाँव देखे। खोज की। वहाँ छह-सात गाँव देखने गये थे। एक मंगल, मंगल कैसा (गाँव)? सात मंगल गाँव है। वहाँ आवास था न तुम्हारा? सात मंगल गाँव। गाँव का नाम सात मंगल। अकेले दिगम्बर, हों! सब किसान वर्ग। पच्चीस घर, तीस घर, चालीस घर परन्तु मात्र दिगम्बर जैन। एकदम

किसान। सात मंगल ऐसा नाम। वे वहाँ कहते थे कि यहाँ मुनि—कुन्दकुन्दाचार्य पधारते थे, दर्शन करते थे। दान का समय मिले, बातचीत का, सुनने का। इसलिए यहाँ कहते हैं। समझ में आया?

यतिश्वर निवास करे, वहाँ धर्म की प्रवृत्ति रहती है। मुनि दो घड़ी, चार घड़ी भगवान के दर्शन करके बैठें। **जहाँ पर धर्म की प्रवृत्ति रहती है, वहाँ पर अनादि काल से संचय की हुई...** है न? **'सत्यघसंचयो विघटते' पापों का नाश होता है।** धर्म श्रवण से अशुभभाव का नाश होता है। और शुभभाव होता है। **भविष्य काल में स्वर्ग-मोक्ष के सुख की प्राप्ति होती है।** है न? **'स्वर्गापवर्गाश्रयं सौख्यं भावि नृणां'** मोक्ष तो अपनी निर्मलता से होता है। परन्तु उसमें जो श्रद्धा-ज्ञान है, उससे होता है और राग उसे भी मोक्ष का कारण, स्वर्ग का कारण व्यवहार से कहने में आया है। **इसलिए गुणवान मनुष्यों को धर्मात्मा श्रावकों का अवश्य आदर करना चाहिए।** है? **'श्रावका: संमता:'** मान्य करना चाहिए। श्रावक गृहस्थाश्रम में भी धर्मात्मा सच्ची श्रद्धा-ज्ञान आदि ऐसा हो, वह भी मान्य है, पूजनीय है। समझ में आया? वन्द्य है। नीचे है, देखो! इक्कीस में। **'वंद्य: सताम्'** २१वीं गाथा में है। समझ में आया? देखो!

इस दु:षम नाम के काल में जिनेन्द्र भगवान के धर्म से क्षीण होने से आत्मा के ध्यान करनेवाले मुनिजनों की ... विरल हो गया। दृढ़ मिथ्यात्वरूपी अन्धकार के फैल जाने से जिनेन्द्र भगवान की प्रतिमा, मन्दिरों, जिनमन्दिरों में भक्ति सहित थे, उनको भक्तिपूर्वक बनवाते थे। मनुष्य इस ... देखने में नहीं आता। ऐसे मनुष्य देखने में नहीं आते। **किन्तु जो भव्य जीव इस समय भी विधि के अनुसार जिनमन्दिर...** सब पाठ में है, हों! **'चैत्ये चैत्यगृहे च भक्तिसहितो य: सो... पि नो दृश्यते यस्तत्कारयते यथाविधि पुनर्भव्य: स वंद्य: सताम्' ऐसे निर्माण करवाते हैं, वह सज्जन वन्दनीय हैं।** ऐसे श्रावक हों तो भी वन्द्य-स्तुति करने योग्य है। पाठ में है। देखो! समझ में आया? २०वाँ है। **'वंद्य: सताम्' 'सताम्'** अर्थात् जीवो को ऐसे जीव भी वन्दनीय अर्थात् आदरणीय-स्तुति करनेयोग्य है। **समस्त... उसकी निर्मल हृदय से स्तुति करते हैं।** लो! समझ में आया?

इसलिए यहाँ कहते हैं... अब अपना चलता विषय। **'संप्रत्यत्र कलौ काले**

जिनगेहे मुनिस्थितिः।' पाठ तो ऐसा ही है। **'जिनगेहे मुनिस्थितिः'।** जिनमन्दिर में मुनि की स्थिति होती है। इसका अर्थ ऐसा नहीं कि अभी सब मुनि जिनमन्दिर में निवास करें। ऐसा कुछ नहीं कहा। यह तो कहते हैं, अभी तो सब जिनमन्दिर में गाँव में ही बसते हैं। अरे! भाई! ऐसा यहाँ नहीं कहा। वहाँ तो मन्दिर बना हो, मुनि आये हों थोड़ी देर वहाँ स्थिति रहे, टिकें। ऐसी बात है। बाकी मुनि तो वनवास, जंगल वनवास था। आहाहा! समझ में आया?

एक गजाधरलाल ने इसका अर्थ ऐसा किया है कि जिनमन्दिर बनाते हैं। परन्तु इसका अर्थ यह कि मन्दिर होवे, वहाँ मुनि आकर बसते हैं। **आहार देकर मुनियों के शरीर की स्थिति करते हैं।** लो ठीक, मुनि की स्थिति। मुनि की-शरीर की स्थिति रखते हैं। यह व्यवहार के कथन हैं। निमित्त से समझावे, तब तो ऐसा ही समझावे न! **मुनियों के शरीर की स्थिति करते हैं। सर्वदेश एक देशरूप धर्म की स्थिति करते हैं।** समझ में आया? **'धर्मश्च दानमित्येषां' और दान देते हैं।** सच्चे मुनियों को स्थिति देते हैं, मदद करते हैं और स्वयं एकदेश पालन करते हैं। **इसलिए इन सबके मूल कारण श्रावक ही है। मुनि का मार्ग निभाना और श्रावक-श्रावक का अपना धर्म स्वयं निभावे।** इसका कारण श्रावक ही है। .... चन्दजी! परन्तु इस प्रकार से, हों! निमित्त-निमित्त सम्बन्ध से चरणानुयोग की पद्धति से ज्ञान कराया है। इसके बिना दूसरा कोई उपाय नहीं हो सकता। इस प्रकार ही कथन की पद्धति चरणानुयोग में (आती है)। ओहो! मुनि आये। ... आये। भाव उत्पन्न हुआ। आहा! भाव कहीं उनके कारण से उत्पन्न हुआ है? समझ में आया? आये। महान प्रह्लाद से।

भरत चक्रवर्ती में आता है न? भरत चक्रवर्ती आहार के समय... भरतेश वैभव में (आता है)। भरत चक्रवर्ती। छह खण्ड का मालिक, छियानवें हजार पद्मिनी जैसी स्त्रियाँ घर में और चरमशरीरी। अन्तिम देह रजकण का, अब दूसरा है नहीं। परन्तु आहार के समय ऐसे मुनियों की राह देखते हैं। आहाहा! अरे! कोई मुनि, अरे! कोई धर्मात्मा (पधारे)। ऐसे सोने का वह पहना होता है - रखड़ी रत्न की, मणि रत्न की। महल में से बाहर निकले। उनके महल भी विशाल होते हैं न! ऐसा झोंपड़ा-बोंपड़ा नहीं होता। मील-दो मील में तो बड़ा मकान होता है। लम्बा, अकेला मणिरत्न बिछाया

हुआ। घर में से निकलकर ऐसे जाते हैं। ऐसे... अरे! कोई मुनि है। उसमें ऊपर से दो मुनि निकलते हैं। है न? आता है न?

मुनि आहार लेने जाते हैं। भरत को आहार का समय है और ऐसे देखते हैं। ओहो! उसमें दो मुनि निकले। पधारो... पधारो। भक्ति आये बिना रहती नहीं। बहुत भाव है। भक्ति का भाव। उनकी योग्यता देव-गुरु-शास्त्र के प्रति का बहुमान। ओहो! ऐसा कहे, आज हमारा आँगन पवित्र हुआ। समझ में आया? व्यवहार की भाषा क्या आवे? आँगन में हमें अन्दर आह्लाद आया है। वह आँगन पवित्र हुए, ऐसा कहने में आता है। समझ में आया? देखो! यह कितने ही लोग कहते हैं न कि भाई! यह निश्चय की ही (बातें करते हैं)। बापू! निश्चय के साथ ऐसा व्यवहार होता है। भाई! व्यवहार नहीं होता, ऐसा नहीं है। परन्तु उसकी मर्यादा है उस प्रमाण का फल होता है। समझ में आया? **धर्म की प्रवृत्ति करते हैं, इसलिए इन सबों के मूल कारण श्रावक ही है।** लो! मूल कारण श्रावक। देखो! समझ में आया? अब कोई किसी का मूल कारण होता नहीं और सबका मूल कारण श्रावक है, ऐसा कहा। और वे उठावे कि मूल कारण तो उपादान है। भाई! अभी सुन न! यह बात नहीं है। समझ में आया? यह तो उपादान तो उपादान ही स्वयं से है, परन्तु सब दूसरे निमित्त की अपेक्षा गृहस्थ श्रावक है, वह धर्म का भाव उसमें निमित्त है, इसलिए उसे मूल कारण निमित्तरूप से कहने में आया है। धन्नालालजी!

सवेरे कहे, ज्ञानस्वरूप प्रभु है न। यह कोई व्यवहार आया है, उसका ज्ञान करते हैं न। व्यवहार मेरा है, (ऐसा) वह मानता नहीं। परन्तु व्यवहार के शास्त्र में उसका प्रमोद, उसे कैसा गिना था यह सब... दे। परन्तु यह बात बतलाते हैं। ओहो! धन्य अवतार! हमारे आँगन सफल हुआ, आज हमारे आँगन में कल्पवृक्ष उगा हुआ। सोने का सूर्य उगा। ऐसा कहते हैं या नहीं? यह पुत्र के विवाह में नहीं कहते शादी करे तब? घर में सोने का सूर्य कहीं नहीं उगा है परन्तु यह महिलाएँ गाँवें न। गाती तो होगी हिन्दी में भी। हमारे काठियावाड़ा में होता है न? 'वेणला भले वाया रे...' सवेरे गावे। 'सोना समो रे सूरज उग्यो।' सूरज तो जो है, वह है। परन्तु हमें पुत्र के विवाह का प्रमोद है तो सूरज को स्वर्ण सम उगा, ऐसा कहा जाता है। और 'थाळ भर्यो रे मोतिये।' विवाह में

आता है। सच्चा मोती एक भी उसके घर में न हो परन्तु बोलते हैं उस लड़के के विवाह के प्रेम में। आता है न उसमें? 'थाळ भर्यो रे सग मोतिये।' लो, यह सग मोती। यह मोती का भरा हुआ हो ऐसा... क्या कहते हैं यह? अन्दर से उसका प्रमोद बतलाते हैं। आहा! हमारे घर में तो मोती के थाल सज्ज हों! ऐसे। ऐसे नहीं। ऐसे सज्ज सरे इतने मोती हमारे घर में। आहाहा! तो जहाँ त्रिलोकनाथ परमात्मा या सन्त घर में आवे.. आहाहा! हमारे घर में तो हीरा-हीरा जड़े हैं। हीरा बरसे, मोती बरसे हमारे घर में। ऐसे प्रमोद के वाक्य निकलते हैं।

भगवान तो जहाँ आहार लेने जाएँ, (वहाँ) इस जगत के परमाणु ऊपर के रत्न होकर बरसते हैं। समझ में आया? रजकण होते हैं न? स्कन्ध... स्कन्ध ऊपर। वे परमाणु रत्न का परिणमन करके नीचे गिरते हैं। सडाट... लाखों, करोड़ों। ओहोहो! उस भूमि का योग पवित्रता में जो आया, उस पुण्य के कारण से, हों! पवित्रता के कारण से नहीं। समझ में आया?

कहते हैं कि मूल कारण श्रावक है। अपने धर्म का भी निभाव करता है और मुनि के धर्म का भी निभाव करता है। इसलिए मूल कारण वह है। समझ में आया? सूक्ष्म-सूक्ष्म व्याख्या समझना चाहिए, हों! ... पाठ ऐसा है। **'संप्रत्यत्र कलौ काले'** यह गाथा आ गयी है, भाई पहले। देखो! इसमें कलिकाल के मुनि तो जिनगृह में ही होते हैं। अरे! भाई! ऐसा नहीं होता, बापू! समझ में आया? मुनि तो आते हैं। मन्दिर के दर्शन करे, आहार-पानी ले। महा भावलिंगी सन्त। उन्हें जरा विकल्प आया तो आते हैं। दर्शन करते हैं। कोई पूछे तो प्रश्न का उत्तर देते हैं। और ५०-१०० मनुष्य इकट्ठे हो गये हों तो जरा प्रवचन भी धर्मलोभी प्राणियों को (सुनाते हैं)। आता है न? मोक्षमार्ग (प्रकाशक) में आता है। मोक्षमार्गप्रकाशक में। मुनि महा... जिन्हें अशुभभाव तो किंचित् रहा नहीं परन्तु धर्म के लोभी प्राणी देखकर... देखकर होता होगा? यह तो उसकी बात आती है। धर्मलोभी ऐसे सुनने (आवें)। विकल्प आया है, उसे समझाते हैं। भाई! मार्ग यह है, बापू! परमात्मा स्वयं अन्दर स्थित है। दूसरे भगवान की भक्ति वह तो शुभभाव है। तेरे भगवान की भक्ति, वह शुद्धभाव है। समझ में आया? वह भक्ति करने बैठा और सुनने बैठा, उसे भी वहाँ सुनाते हैं। तुम क्यों भक्ति करने आये हो भगवान की? अब सुन न,

भाई! और उसे कहते हैं कि परमात्मा अन्दर विराजता है, उसकी भक्ति, वह सत्य और शुद्ध भक्ति है। पर की भक्ति व्यवहार (भक्ति है), तो तुम क्यों यह भक्ति करते हो? ऐसा तर्क आता होगा उस श्रावक को? अरे! भाई! ऐसे भाव मुनि को आते हैं, परन्तु उन्हें श्रद्धा-ज्ञान में क्या है, यह बात वे बाहर प्रसिद्ध करते हैं। कहो, समझ में आया?

छह गाथायें हुई। अब श्रावक के प्रतिदिन के सत्कर्म की व्याख्या। पंचम गुणस्थान के योग्य जिसकी दशा (हुई है), उसे ऐसा भाव छह कर्मों का भाव आये बिना नहीं रहता। होता ही है। समझ में आया? पंचम गुणस्थान श्रावक, सम्यग्दर्शन-ज्ञान (तथा) बारह व्रतधारी, उसे भी षट्कर्म का शुभभाव हमेशा आता है, उसके छह प्रकार वर्णन किये जाते हैं। उसे होते हैं। यह गाथा कहेंगे...

(**श्रोता :** प्रमाण वचन गुरुदेव!)